राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियों पर संविधान सभा का विचार मंथन

डॉ. नीलम एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान

बनवारी लाल जिंदल सुईवाला महाविद्यालय तोशाम

संक्षेप

भारत का राष्ट्रपति भारत सरकार में सर्वाधिक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली पदों में से एक है। राज्य के प्रमुख के रूप में राष्ट्रपति की भूमिका को निर्वहन करने के लिए, भारत का संविधान राष्ट्रपति को कुछ शक्तियाँ एवं कार्य प्रदान करता है। कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में संविधान द्वारा राष्ट्रपति को कुछ विशेष शक्तियाँ प्रदान की गई हैं जिन्हें आपातकालीन शक्तियों के नाम से जाना जाता है। भारत के संविधान में संघात्मक व्यवस्था की सभी विशेषताएं समाहित हैं किन्तु भारतीय संविधान में कुछ विशिष्ट प्रावधान है जिनका समावेश अन्य देशों के कार्य संचालन में उत्पन्न कठिनाईयों को देखते हुए किया गया है। प्रस्तुत शोधपत्र में संघात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत उन विशिष्ट परिस्थितियों में राष्ट्रपति की शक्तियों पर प्रकाश डाला गया है।

भूमिका

भारतीय संविधान में संघात्मक शासन प्रणाली की व्यवस्था की गई है. जिसमें संघ को राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्तियाँ दी गई हैं। संविधान निर्माताओं का अटल विश्वास था कि सशक्त केन्द्रीकृत व्यवस्था ही देश की जटिल समस्याओं के समाधान में सक्षम हो सकती है। भारतीय संघात्मक व्यवस्था पर राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियों ने सर्वाधिक घातक प्रहार किया है।

भारत के संविधान की अनूठी व्यवस्था का प्रभाव इसके संघात्मक स्वरुप पर कहीं पर भी इतना अधिक प्रखर नहीं है, जितना कि संविधान के आपातकालीन प्रावधानों पर है, इस प्रावधान द्वारा शक्तियों का विभाजन इस प्रकार परिवर्तित किया जा सकता है कि संविधान संघात्मक की बजाय एकात्मक हो जाता है। आपातकालीन प्रावधान संविधान के भाग 18 में विस्तृत रुप में वर्णित है। अनुच्छेद 352 से 360 के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है कि देश में बाह्य आक्रमण, आन्तरिक विद्रोह, वित्तीय संकट तथा राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता पर राष्ट्रपति, इनमें में किसी भी कारण से उत्पन्न आपात स्थिति से देश को उबारने के लिए मन्त्रिपरिषद् की सलाह से, आपातकाल की उद्घोषणा कर सकता है।

अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाता है कि गंभीर आपात विद्यमान है जिससे युद्ध या बाह्य आक्रमण या आन्तरिक विद्रोह (सशस्त्र विद्रोह) के कारण भारत या उसके राज्य-क्षेत्र

के किसी भाग की सुरक्षा संकट में है तो राष्ट्रपति द्वारा आपातकाल की घोषणा की जा सकती है। राष्ट्रपति यह उद्घोषणा तब भी कर सकता है जब बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह की सम्भावना हो कि संकट सन्निकट है। आपातकाल के दौरान संघ की विधायिका एवं कार्यपालिका को असाधारण शक्तियाँ प्राप्त हो जाती है।

अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत यदि किसी राज्य के राज्यपाल से प्रतिवेदन प्राप्त होने पर या अन्यथा यह समाधान हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसमें उस राज्य का शासन संविधान के उपबंधों के अनुरूप नहीं चलाया जा सकता तो राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा राज्य का शासन अपने हाथ में ले सकता है। अनुच्छेद 360 के अनुसार यदि राष्ट्रपति को यह विश्वास हो गया है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिससे भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्त्व या प्रत्यय संकट में है तो वह वित्तीय आपात की उद्घोषणा कर सकता है, ऐसी स्थिति में संघ को वित्तीय मामलों के नियन्त्रण के लिए राज्य को निर्देश देने का अधिकार प्राप्त हो जाएगा।

अनुच्छेद 355 के अन्तर्गत संघ को यह कर्तव्य सौंपा गया है कि वह बाह्य आक्रमण एवं आन्तरिक अशांति से प्रत्येक राज्य को सुरक्षा प्रदान करे तथा प्रत्येक राज्य की सरकार का संविधान के उपबंधों के अनुसार चलाया जाना सुनिश्चित करे। डा. अम्बेडकर ने संविधान के अनुच्छेद 355 का औचित्य दो आधारों पर सिद्ध किया है। प्रथम, हमारा संविधान संघीय है यदि कोई संवैधानिक प्रावधान न हो तो संघ प्रान्तों के मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। द्वितीय, इस अनुच्छेद के द्वारा संघ को यह उत्तरदायित्व सौंपा गया है कि वह बाह्य आक्रमण एवं आन्तरिक अशान्ति से इकाइयों की रक्षा करें।

इस प्रकार अनुच्छेद 355 के माध्यम से अपने दायित्व के निवर्हन के लिए संघ सरकार को राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता के आधार पर अनुच्छेद 356 का प्रयोग करके हस्तक्षेप करने का संवैधानिक अधिकार प्राप्त हो जाता है। इस शक्ति के प्रयोग से राष्ट्रपति राज्य की जनता द्वारा निर्वाचित सरकार को अपदस्थ कर सकता है तथा राज्य का शासन अपने हाथ में ले सकता है। इसे 'राज्यों में राष्ट्रपति-शासन' के नाम से जाना जाता है। अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत राष्ट्रपति अथवा संघीय सरकार को प्रदत्त शक्तियों का प्रावधान केवल भारतीय संविधान की ही विलक्षणता है, जो कि
इसे अन्य संघीय संविधानों से भिन्न स्वरुप प्रदान करती है। इसे सम्पूर्ण रूप से जानने के लिए इसके उद् गम स्त्रोत एवं उद्भव-काल को जानना अत्यावश्यक है।

संविधान में अनुच्छेद 356 के पदार्पण की आधारशिला —

प्रान्तीय स्वायत्तता की योजना के अन्तर्गत ब्रिटिश सरकार ने भारत सरकार अधिनियम, 1935 (Govt. of India Act, 1935) के द्वारा प्रान्तों में उत्तरदायी शासन का प्रावधान किया। ब्रिटिश सरकार अपने औपनिवेशिक हितों के संवर्द्धन हेतु भारत के प्रान्तों को अपने कठोर नियन्त्रण में भी रखना चाहती थी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत सरकार अधिनियम, 1935 के सैक्शन 93 के अन्तर्गत राज्यपाल को यह शक्ति प्रदान की गई कि यदि राज्यपाल को यह विश्वास हो जाए कि प्रान्त का शासन इस अधिनियम के उपबंधों के अनुरुप नहीं चलाया जा सकता तो वह राज्य की जन- निर्वाचित सरकार को अपदस्थ करके प्रान्तीय शासन अपने हाथ में ले सकता है। इस सन्दर्भ में राज्यपाल मन्त्रिपरिषद् के सदस्यों की सलाह से आबद्ध नहीं था। इसी प्रकार ही केन्द्रीय सरकार के सन्दर्भ में यह शक्ति गवर्नर जनरल को प्रदान की गई थी। इस अधिनियम से पूर्व भारत में एकात्मक शासन प्रणाली थी इसलिए प्रान्तीय शासन में केन्द्रीय हस्तक्षेप की आवश्यकता उत्पन्न नहीं होती थी।

भारत सरकार अधिनियम, 1935 के सैक्शन 93 के अन्तर्गत —

यदि किसी समय प्रान्त के राज्यपाल का 'समाधान' हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें प्रान्त का शासन इस अधिनियम के उपबंधों के अनुरुप नहीं चलाया जा सकता, तो वह उद्घोषणा द्वारा -

(क) वह घोषणा कर सकेगा कि उसके कार्य उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट सीमा तक स्वविवेकाधीन प्रयोक्तव्य होंगे।

इस प्रकार गवर्नर जनरल की पूर्वानुमति से जारी की गई उद्घोषणा संसद के अनुमोदन से पूर्व 6 मास तक तथा संसद के अनुमोदन के पश्चात 12 मास तक प्रवृत रहेगी तथा अधिकाधिक यह 3 वर्ष तक लागू रह सकती थी। राज्यपाल की शक्तियों पर केवल एक प्रतिबन्ध था कि उद्घोषणा के समय वह उच्च न्यायालय (High Court) की शक्तियों को स्थगित नहीं कर सकता था।

इस प्रकार भारत में प्रान्तों में केन्द्रीय हस्तक्षेप की अवधारणा का उद्भव हुआ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेता भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत राज्यपाल की आपातकालीन शक्तियों के कट्टर आलोचक थे। स्वयं नेहरु, जो कि उस समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष थे, ने 1935 के अधिनियम के इस प्रावधान की आलोचना की तथा इसे साम्राज्यवादियों के प्रभुत्व के शिकंजे को और अधिक शक्तिशाली बनाने वाला 'दासता का चार्टर' कहा। इस अधिनियम के अन्तर्गत राज्यपाल को प्रान्तों पर प्रदान की गई अत्यधिक स्वविवेकी शक्तियों का अनेक राष्ट्रवादियों ने भी विरोध किया। यह हमारे देश

की विडम्बना है कि जब स्वतन्त्र भारत के लिए संविधान निर्मित करने का उत्तरदायित्व राष्ट्रीय नेताओं के कंधों पर आया तो ये सभी नेता उसी प्रावधान के प्रबल समर्थक बन गए जिसके ये कट्टर आलोचक थे।

हमारे संविधान निर्माताओं ने 1935 के अधिनियम को इस प्रकार शिरोधार्य किया मानो वह कोई पवित्र वेदवाक्य हो। उन्होंने इसे बाइबल की भांति माना एवं इसका अनुसरण किया। स्वयं अम्बेडकर का सुझाव था कि संविधान में भारत सरकार अधिनियम, 1935 के सादृश्य कुछ उपबन्ध सन्निविष्ट किए जाने चाहिए तथा इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु भारत के संविधान में सैक्शन 93 के सादृश्य अनुच्छेद 356 को समाहित किया गया। निःसन्देह भारत के प्रान्तों के लिए सेक्शन 93 के अन्तर्गत आपातकालीन प्रावधान का एकमात्र उद्देश्य ब्रिटिश सरकार द्वारा अपने औपनवेशिक हितों का संवर्द्धन करना था। परन्तु एक पूर्णतया भारतीय संविधान सभा द्वारा गणतन्त्रीय संविधान में आपातकालीन शक्तियाँ, गैर-औपनवेशिक एवं सद्भावनापूर्ण उद्देश्य से, संविधान में समाविष्ट की गई

वस्तुतः संविधान निर्माता भारत की सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों में संघीय शासन प्रणाली के अन्तर्गत संघ की इकाइयों द्वारा सफलतापूर्वक कार्य-निष्पादन के प्रति आश्वस्त नहीं थे। संविधान निर्माताओं के मन में उपजी यह आशंका ही संविधान में अनुच्छेद 356 के पदार्पण की आधारशिला थी। संविधान निर्माताओं के संशय निराधार नहीं थे, इस संशय के लिए भारत की तत्कालीन परिस्तिथियाँ उत्तरदायी थी। जो कि निम्नलिखित हैं -

(1) देशी रियासतों के क्षेत्रों से जो राज्य गठित किए गए थे, उन्हें लोकतन्त्रीय शासन प्रणाली का अनुभव नहीं था। यद्यपि 1935 के अधिनियम के अधीन उन्हें दैत शासन प्रणाली के अन्तर्गत राजनैतिक व्यवस्था के संचालन का अवसर प्राप्त हुआ, तथापि यह अनुभव अल्प-अवधि का होने के कारण अपर्याप्त था।

(2) भारत में भाषा, धर्म, जाति सम्बन्धी विभिन्नताओं के कारण उपजा भावनाओं का उद्वेग राज्य सरकारों की नियमित कार्यवाही में बाधक बन सकता है।

(3) राजनैतिक दलों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि के कारण विधानसभा में एक राजनैतिक दल द्वारा स्पष्ट बहुमत प्राप्त न कर पाने की स्थिति से उत्पन्न राजनैतिक गतिरोध प्रशासकीय व्यवस्था को पंगु बना सकता है।

(4) साम्प्रदायिक विचारधारा के दबाव के कारण राज्य सरकार द्वारा संघीय संविधान एवं कानून का उल्लंघन किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त हमारे संविधान का आधार सामाजिक न्याय एवं समतावाद का आदर्श है, यह सम्भव है कि कई राज्य इसके और संविधान की भावना के विरूद्ध जाने की चेष्टा कर सकते है। ऐसी चेष्टाओं को निर्मूल बनाने के लिए तथा संघात्मकता की रक्षा हेतु संविधान में अनुच्छेद 356 का प्रावधान किया गया। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु भारत सरकार अधिनियम, 1935 के सैक्शन 93 को थोड़े से परिवर्तन सहित स्वतन्त्र भारत के संविधान में अनुच्छेद 356 के रूप में सन्निविष्ट कर लिया गया। इन दोनों प्रावधानों में इतनी अधिक समानता है कि यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि अनुच्छेद 356 सैक्शन 93 के यथातथ्य समकक्ष है। संविधान सभा के एक सदस्य के अनुसार 'यदि आप भारत सरकार अधिनियम, 1935 को देखें तो आप पाएगें कि अनुच्छेद 356 अक्षरशः सैक्शन 93 का ही पुनरूत्पादन है। केवल इग्लैंड की संसद के स्थान पर भारत की संसद तथा 6 मास की अवधि के स्थान पर 2 मास की अवधि को प्रतिस्थापित करना है, शेष सब समरूप है।' निःसन्देह प्रथम दृष्टि में अनुच्छेद 356 की संविधान में विद्यमानता सुखद प्रतीत नहीं होती क्योंकि यह भारत सरकार अधिनियम, 1935 के सैक्शन 93 का संविधान में पुनर्आगमन हैं। संघ की इकाइयों में संवैधानिक तन्त्र की विफलता पर सरकार को निलम्बित किया जा सकता है तथापि इन दोनों में अनेक आधारों पर भिन्नता है :

(1) भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत संवैधानिक तंत्र की विफलता की घोषणा गवर्नर जनरल की पूर्वानुमति से राज्यपाल द्वारा की जाती थी परन्तु अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत राज्यपाल राज्य की स्थिति के सन्दर्भ में राष्ट्रपति को केवल प्रतिवेदन प्रेषित कर सकता है। जिसके आधार पर राज्य में राष्ट्रपति शासन की उद्घोषणा करने का निर्णय लेने की शक्ति राष्ट्रपति के पास है।

(2) भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत गवर्नर जनरल को बिना राज्यपाल की सहमति के हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था परन्तु भारत का राष्ट्रपति, अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत 'अन्यथा' शब्द के समावेश से, राज्यपाल के प्रतिवेदन के बिना भी राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता की घोषणा कर सकता है।

(3) भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत राज्यपाल उच्च न्यायालय की शक्तियों के अतिरिक्त शेष प्रान्तीय अधिकारियों में निहित या उनके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या कोई भी शक्तियाँ अपने हाथ में ले सकता था तथा उनका प्रयोग स्वविवेकानुसार करता था। परन्तु अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत राष्ट्रपति उच्च न्यायालय के अतिरिक्त राज्य के किसी भी प्राधिकारी में निहित या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या कोई भी

शक्ति अपने हाथ में ले सकता है परन्तु राष्ट्रपति विधानसभा सम्बन्धी शक्तियाँ संसद द्वारा प्राधिकृत करने पर ही प्राप्त कर सकता है।

(4) भारत सरकार अधिनियम, 1935 के सैक्शन 93 के अनुसार संसद की स्वीकृति के बिना उद्घोषणा 6 मास तक जारी रह सकती थी। परन्तु वर्तमान संविधान के अनुसार संसद के अनुमोदन के बिना उद्घोषणा 2 मास तक जारी रह सकती है।

(5) सैक्शन 93 के अनुसार संसद द्वारा अनुमोदन के पश्चात उद्घोषणा एक वर्ष तक प्रवृत रह सकती थी, परन्तु अनुच्छेद 356 के अनुसार संसद द्वारा अनुमोदन के पश्चात उद्घोषणा 6 मास तक प्रवृत रह सकती है।

राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता के सन्दर्भ में मूल प्रावधान में विशेषतः राज्यपाल एवं केन्द्रीय सरकार की भूमिका से सम्बन्धित कुछ परिवर्तन किए गए। इस विषय पर विचारमंथन के पश्चात संविधान निर्माता इस निष्कर्ष पर पहुँचें कि राज्यपाल जनता द्वारा निर्वाचित किए जाने की अपेक्षा राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाने चाहिए तथा प्रारुप संविधान के अनुच्छेद 188 में वर्णित राज्यपाल की सभी स्वविवेकीय शक्तियाँ समाप्त कर देनी चाहिए। क्योंकि जब राज्य में कानून एवं व्यवस्था संकट में हो तो ऐसे संकटकाल में राज्यपाल के लिए स्वविवेकाधीन कार्य निष्पादन सम्भव नहीं होगा। इन निष्कर्षों के आधार पर अम्बेडकर ने 3 अगस्त, 1949 को संविधान सभा के समक्ष कुछ महत्वपूर्ण संशोधन प्रस्तुत किए जिसके अन्तर्गत :

(1) अनुच्छेद 188 को समाप्त कर दिया गया।

(2) एक नया अनुच्छेद 277A (वर्तमान संविधान में अनुच्छेद 355) समाविष्ट किया गया जिसके अन्तर्गत केन्द्र को राज्यों की सुरक्षा का दायित्व सौंपा गया।

(3) अनुच्छेद 278 (वर्तमान संविधान में अनुच्छेद 356) के साथ अनुच्छेद 278A (वर्तमान संविधान में अनुच्छेद 357) समाहित किया गया। तथा अनुच्छेद 278 में 'अन्यथा' शब्द जोड़कर राष्ट्रपति को, राज्यपाल द्वारा प्रतिवेदन के अभाव में भी, राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता के कारण हस्तक्षेप का अधिकार दिया गया।

(4) प्रारुप संविधान के अनुच्छेद 278A के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया कि राज्य विधानमण्डल की कानून निर्माण की शक्ति संसद यदि चाहे तो राष्ट्रपति को, या किसी अन्य प्राधिकारी को जिसे राष्ट्रपति इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, प्राधिकृत कर सकती है

3-4 अगस्त, 1949 को संविधान-सभा में राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियों पर वाद-विवाद के समय कुछ सदस्यों ने अनुच्छेद 278 (वर्तमान संविधान में अनुच्छेद 356) को लोकतन्त्र के लिए विध्वंसकारी बीज बताते हुए चिंता प्रकट की कि कहीं ऐसा न हो कि आपातकाल के नाम पर राज्यों की स्वायत्तता का ही अतिक्रमण हो जाए।

संविधान-सभा में अम्बेडकर ने आपातकालीन प्रावधानों के प्रति उपजे संशयों के लिए सदन के सदस्यों को आश्वस्त करते हुए कहा कि ये अनुच्छेद यदि कभी प्रवृत किए जाते है तो राष्ट्रपति, जिसे यह शक्तियाँ प्रदान की गई है, किसी भी प्रांत के प्रशासन को निलम्बित करने से पूर्व उचित सावधानी रखेंगे ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर राष्ट्रपति सर्वप्रथम सम्बन्धित प्रान्त को चेतावनी जारी करेंगे। यदि यह चेतावनी असफल रहती है तो राष्ट्रपति का दूसरा कदम यह होगा कि यह सम्बन्धित राज्य की जनता को निर्वाचन प्रक्रिया के माध्यम से समस्या के समाधान का अवसर प्रदान करेंगे। यदि यह दोनों प्रकार की उपचारात्मक कार्यवाहियां असफल हो जाए, केवल तभी राष्ट्रपति द्वारा इस अनुच्छेद को प्रवृत किया जाएगा।

अम्बेडकर ने संविधान सभा के कुछ सदस्यों की आशंकाओं के प्रत्युत्तर में कहा कि इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि इन उपबन्धों की राजनैतिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु दुरुपयोग की सम्भावना है परन्तु यह आपत्ति तो संविधान के प्रत्येक उस भाग पर लागू होती है जिसके माध्यम से केन्द्र को राज्यों पर प्रभुत्वशाली शक्तियाँ प्रदान की गई है। इसके साथ ही अम्बेडकर ने भविष्य में संविधान को क्रियान्वित करने वालों के प्रति विश्वास व्यक्त करते हुए कहा कि हम आशा करते हैं कि ये अनुच्छेद प्रवृत नहीं किए जाएंगे तथा वे प्रायः मृतप्राय रहेंगे अर्थात् पुस्तक में ही बने रहेंगे।

निष्कर्ष

निः सन्देह संवैधानिक व्यवस्था के संचालन में राजनीति के प्रयोग की अपरिहार्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता। आपातकालीन शक्तियों के संवैधानिक और राजनीतिक प्रयोग को पृथक नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 356 शान्तिपूर्ण ढंग से सत्ता हस्तांतरण को सम्भव बनाता है। यद्यपि यह एक महत्वपूर्ण अस्त्र है तथापि यह महत्वपूर्ण तभी है जब इसे उचित प्रतिबन्धों सहित क्रियान्वित किया जाए। वस्तुतः यह आपातकालीन प्रावधान एक आवश्यक बुराई है। संविधान के अनुच्छेद 356 को सार्थक बनाने के लिए केवल कानून एवं संवैधानिक प्रावधानों पर आश्रित नहीं रहा जा सकता। इसके लिए आवश्यकता है कि राजनीतिज्ञ, जो कि व्यवस्था का संचालन करते हैं, उच्च नैतिक गुणों से युक्त हो। प्रथम राष्ट्रपति डा.

राजेन्द्र प्रसाद के शब्दों में "यदि निर्वाचित प्रतिनिधि सक्षम हैं, चरित्र के धनी एवं ईमानदार हैं तो वे दोषयुक्त संविधान द्वारा भी उत्तम कार्य करने में सक्षम होंगे। यदि उनमें इन गुणों का अभाव हैं तो संविधान देश की मदद नहीं कर सकता। आखिरकार, संविधान तो मशीन की भांति निर्जीव वस्तु है। यह उन व्यक्तियों के माध्यम से जीवन प्राप्त करता है जो इसे नियन्त्रित एवं संचालित करते हैं। भारत को आज और कुछ नहीं केवल ऐसे ईमानदार व्यक्तियों की आवश्यकता है, जिनके लिए राष्ट्रहित सर्वोपरि हो।"

सन्दर्भ

एडमिनिस्ट्रेटिव रिफार्मस् कमीशन ऑन सेन्टर स्टेट् रिलेशनशिप, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1969.

कमीशन ऑन सेन्टर स्टेट् रिलेशनस् (सरकारिया आयोग), गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, नासिक, 1988.

कान्स्टिट्यूएन्ट असेम्बली ऑफ़ इण्डिया, ड्राफ्ट कान्स्टिट्यूशन ऑफ़ इण्डिया, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1948.

कान्स्टिट्यूएन्ट असेम्बली ऑफ़ इण्डिया, ड्राफ्ट कान्स्टिट्यूशन ऑफ़ इण्डिया, एज़ रिवाइज़्ड बाइ द ड्राफ्टिंग कमेटी, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1949.

कान्स्टिट्यूएन्ट असेम्बली डिबेट्स, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1949.

द गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया एक्ट 1935, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1936.

प्रेजीडेन्टस् रुल इन् द स्टेट्स एंड यूनियन टेरिटरिज़, लोकसभा सेक्रेटेरिअट्, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1996 एवं 2016.

यूनियन - स्टेट् रिलेशनस् (ए स्टडी), लोकसभा सेक्रेटेरिअट्, गवर्नमेन्ट ऑफ़ इण्डिया प्रेस, न्यू दिल्ली, 1970.

भारत का संविधान (1 सितम्बर 2010 को यथा विद्यमान) विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, नई दिल्ली।